वेदान्त आश्रम एवं मिशन की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष - २५ अक्टूबर - २०२५ प्रकाशन - १०

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

अक्टूबर २०२५

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

वेदान्त पीयूष

विषय सूचि

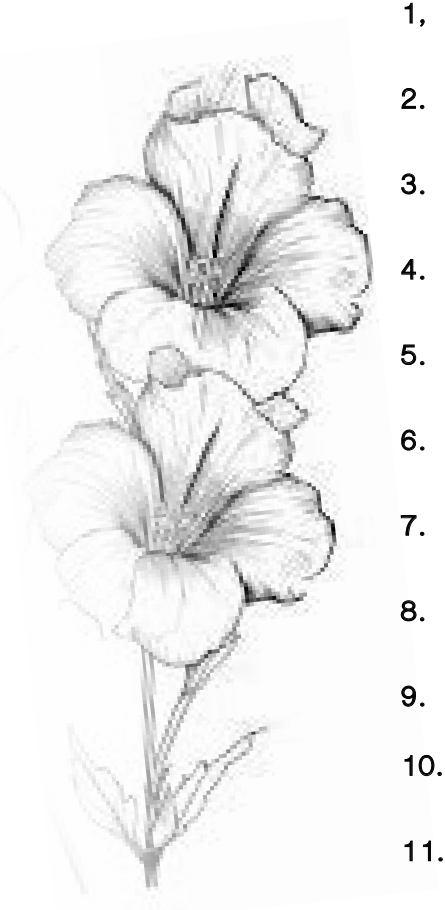

1,	प्रकाशक पृष्ठ	02
2.	श्लोक	05
3.	पू. गुरुजी का संदेश	06
4.	वाक्यवृत्ति	13
5.	गीता और मानवजीवन	18
6.	जीवन्मुक्त	23
7.	श्री कैकेयी चरित्र	29
8.	कथा-रैक्व गाड़ीवाला	33
9.	आश्रम-मिशन समाचार	37
10.	आगामी कार्यक्रम	47
11.	इण्टरनेट समाचार	48
12.	लिन्क	50

अक्टूबर 2025

आत्मबोध

श्लोक : ५१

बाह्यानित्य सुखासक्तिं
हित्वात्मसुखनिर्वृतः।
घटस्थदीपवत्स्वस्थः
स्वान्तरेव प्रकाशते।।

बाह्य अनित्य सुख की आसक्ति का त्याग करके आत्मानन्द में तृप्त जीवन्मुक्त अपने भीतर घट में स्थित दीपक की तरह स्वयं ही देदीप्यमान होता है।।

सन्देश

पूज्य गुरुजी
स्वामी आत्मानन्दजी

विदित और अविदित

विदित और अविदित शब्द का अर्थ

केनोपनिषद् में, जब एक शिष्य अपने गुरु से यह बताने का अनुरोध करता है कि मन और इन्द्रियों को कौन चेतनता देता है, तो गुरु पहले कहते हैं कि जो हमारी सभी क्षमताओं को चेतनता देता है, उसे अधिक से अधिक 'मन का मन', कान का कान' आदि कहा जा सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि उसे चेतनता देनेवाले में दुनिया की किसी भी अन्य वस्तु की तरह कोई गुण नहीं है। आमतौर पर इस्तेमाल किया जानेवाला हर शब्द केवल एक सापेक्ष संकेत है, उसका वर्णन नहीं। हमारी इन्द्रियां उसे विषयीकृत करने के लिए नहीं बनी हैं – इसका सीधा कारण यह है कि सभी इन्द्रियां एक बहुत ही सीमित दायरे में काम करती हैं। वस्तुतः हमारे शब्द और मन उसे कभी देख नहीं पाते। हालांकि, गुरु कहते हैं कि मैं तुम्हें एक बहुत ही मार्मिक संकेत देता हूं, जिसके द्वारा साधक उसका अवश्य अनुभव करते हैं।

आत्मज्ञान के लिए लक्षणा

इस विषय की ऐसी पृष्ठभूमि बनाने के बाद आचार्य कहते हैं कि – 'यह हर ज्ञात वस्तु से भिन्न है, तथा अज्ञात भी नहीं है।' जो कुछ भी ज्ञात है, उसे विदित कहा जाता है, जब कि जो कुछ भी अज्ञात है, वह अविदित है। 'विदित और अविदित' का तात्पर्य क्या है, पहले उसे समझें और फिर उन सब का निषेध करने पर ही उसे जानने की सम्भावना खुल जाएगी।

विदित ज्ञात है, अविदित सम्भावितरूप से ज्ञात है

हमारे जीवन में अब तक एकत्र किया गया सारा ज्ञान 'विदित' है। भविष्य में भी जो कुछ भी हम जानने की समभावना रखते हैं, वह भी विदित होगा। हमारी इन्द्रियां अब तक जो कुछ भी जान सकती हैं और जान चुकी है, वह सब विदित है। किन्तु गुरु यहां स्पष्टरूप से कह रहे हैं कि यह सब वास्तविक सत्य नहीं है, जिसमें हमारी कल्पनाएं भी सम्मिलित है। एक ही झटके में उन्होंने वह सब कुछ हटा दिया जिस पर हमारा जीवन आधारित था। श्रुति यही कहती है, यह तर्कसंगत भी है, और यह हमारे अनुभवों का भी सत्य है। अन्ततः अब तक जो कुछ भी हम जानते हैं, उसे जानने के बावजूद, हमें अपने अपने क्षेत्रों के सम्बन्ध मे एक बुद्धि

मान व्यक्ति कहा जा सकता है, किन्तु यह सच है कि हम अभी भी खोज कर रहे हैं। उस दिशा में कुछ भी हमारी वास्तविक मदद नहीं कर पाया है।

अपराविद्या की भूमिका और लाभ

यद्यपि हमारे पास जो कुछ भी है, या कहीं भी किसी ने भी जो कुछ भी जाना है, उसके प्रति निष्पक्ष होना चाहिए क्योंकि उसका एक महत्व है। उपनिषद् प्रत्यक्ष संसार को ठीक से जानने की प्रासंगिकता को नकारते नहीं है। यहां कोई भी क्षेत्र, कोई भी विशेषता हो, वह विभिन्न तरीके से मदद करती है। यह हमारी बौद्धिक क्षमता को निखारने में मदद करती है, यह उस विशेष क्षेत्र में दुनिया की बेहतर तरीके से सेवा करने में मदद करती है। डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, आदि सभी उच्च, विशिष्ट लोग आस-पास के लोगों की विशेषरूप से मदद करते हैं पूरी तरह से नहीं, किन्तु निश्चितरूप से हमसे बेहतर तरीके से। विदित संसार के इस ज्ञान को अपराविद्या कहा जाता है, और मुण्डकोपनिषद् बताता है कि इसका सम्मान किया जाना चाहिए और इसे आगे बढाया जाना चाहिए। यद्यपि अपने मन में कभी भी ऐसा कोई संदेह नहीं आना चाहिए

कि सिर्फ इसलिए कि वे हमारी अपेक्षा हमारे लिवर आदि के कार्य को बहुत बेहतर तरीके से जानते हैं, तो वे ईश्वर को भी जानते होगे! जाहिर है कि यह हास्यास्पद है। यही यहां प्रकट किया जा रहा है। अपरा विद्या दुनिया की सेवा करने और अपनी बौद्धिक क्षमताओं को निखारने के लिए अच्छी है, किन्तु केवल उसी से कभी भी बहुत संतुष्ट न हो, अन्यथा आप परम सत्य के साधक नहीं है। अपरा विद्या से जीवन व्यापन होता है, इसलिए इसका अनुसरण अवश्य करें किन्तु विनम्र बने रहें और खोज करते रहें।

अविदित से विदित की ओर

ज्ञान की सभी खोजें संसार में किसी चीज पर से अज्ञान के पर्दे को हटाने के बारे में हैं। शुरु में वह अविदित होता है, फिर हम उस सत्य को उजागर करने का संकल्प लेते हैं और अन्त में, एक दिन उसे जान लेते हैं, और वह विदित हो जाता है। इसलिए अविदित मूलरूप से 'सम्भावितरूप से विदित' है – हमारे या किसी अन्य के द्वारा। यदि किसी चीज को विदित बनाया जा सकता है, तो मूलरूप से वह विषयीकृत किया जा रहा है। श्रुति उसीका निषेध करती है। यह कहती है कि जो कुछ भी आज अविदित है, वह इस लक्ष्य, परं सत्य के लिए जानना

नहीं है। श्रुति ने अपराविद्या की भी महत्वपूर्ण भूमिका बताई है, किन्तु शाश्वत सत्य को जानने के लिए नहीं। कभी भी इस जाल में न फंसे कि किसी वस्तु को जानने से आप विषय के सत्य को भी जान जाएंगे। दोनों में कोई सम्बन्ध नहीं है।

विदित और अविदित– सभी सांसारिक वस्तुएं हैं।

दुनिया में सब कुछ या तो विदित है या अविदित। इसलिए जब भी हम इस दायरे में होते हैं तो मूल रूप से हम बहिर्मुख ही होते हैं और इस अद्‌भुत दुनिया या उसके हिस्से बन कर जानते हैं। यद्यपि अब हम जानते है कि अगर जीवन के शाश्वत सत्य को जानना चाहते हैं, जो विषय, 'मैं' का भी सत्य है, तो क्या करना है? विदित या अविदित सब कुछ एक तरफ रख दें – बस यह महसूस करके अपना मन खाली कर दे कि अब तक जीविका कमाना ही अपनी प्राथमिकता थी।

इस कथन का निहितार्थ

अब हम कुछ स्थायी और शाश्वत चाहते हैं, तो खिडकी के बाहर झांकने से काम नहीं बनेगा। उन सभी भूमिकाओं को छोड दें जो हम अपनी सांसारिक जिम्मेदारियों

विदित और अविदित

और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए करते हैं। यह सरल कार्य कभी-कभी सब से मुश्किल बन जाता है। हमें एहसास होता है कि हम बाहरी चीजों से सचमुच सम्मोहित थे और हमने उससे दूर होने की अपनी स्वतंत्रता लगभग खो दी है। मैं का सत्य आज भी प्रकट हो रहा है। वास्तविक स्वतंत्रता सिर्फ कुछ करने की हमारी क्षमता नहीं है, बल्कि कुछ भी न करने की हमारी क्षमता भी शामिल है। इसलिए मन शान्त रखकर, उसे सभी विदित और अविदित से मुक्त रखने से ही अपना सत्य प्रकट होता है। वास्तव में, हम इसे प्रकट नहीं करते हैं, वह स्वयं प्रकाशस्वरूप, सत्य स्वयं प्रकट होता है। हमें बस खुद को उस दायरे तक उठाना है – यही इस गहन कथन का सार है।

आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

वाक्यवृत्ति

स्वामिनी अमितानन्द

यस्य प्रसादादहमेव विष्णुः मयि-एव सर्वं परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्यान्घ्रि पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्।।

श्लोक – २७

देहेन्द्रिय मनः प्राणा
हंकृतिभ्यो विलक्षणः।
प्रोज्झिता शेष षड्भाव
विकारस्त्वं पदाभिधः॥

देह, इन्द्रिय, मन, प्राण और अहंकार से आत्मा विलक्षण है, अतः जो जन्मादि षड्विकार से रहित है, वह त्वं पदार्थ का लक्ष्यार्थ है।

वाक्य वृत्ति

आचार्य ने पूर्व श्लोक में साक्षी को त्वं पद का अर्थ बताया। यह साक्षी समस्त देह, इन्द्रिय, प्राण, मन आदि समस्त उपाधियों का साक्षी है। इस श्लोक में भी आचार्य त्वं पद के लक्ष्यार्थ को ही बता रहे हैं।

देहेन्द्रिय मनः प्राणा..... – यह देह आदि सब हमारी उपाधियां है। यह सब उपाधि दृश्य, पंच महाभूतों से निर्मित, गुणात्मक, विकारी है। सर्व प्रथम उसका दृश्यत्व होना ही उसकी देश, कालतः संकुचिता दीखाता है। पंच महाभूतों से निर्मित होना ही दीखाता है कि सृष्टि के पूर्व उसका अस्तित्व नहीं था, इस समय है, तथा सतत परिवर्तन को प्राप्त होता रहता है। तीन गुणों से निर्मित होने से उसमें गुणात्मक परिवर्तन व विकार भी होता है। इसके अलावा उसका षड्विकारित्व है। देह का एक समय जन्म होकर अस्तित्व में आता है, उसमें वृद्धि होती, परिवर्तन होता है, अनेकों विकार होते है। शनैः शनैः क्षय होता जाता है। बाल्य आदि अवस्थाओं

को प्राप्त होता है और अन्ततः विनश्यति अर्थात् नष्ट हो जाता है। हमारी इन्द्रियों में भी सतत विकार, क्षय आदि का अनुभव होता है। एक समय चक्षु आदि में देखने की क्षमता अच्छी होती है किन्तु उसमें भी मन्दता आदि अनुभव होता है। प्राण भी जब तक शरीर का अस्तित्व होता है, तब तक टिके रहते हैं, किन्तु एक समय वह भी विलीन हो जाते है। मन में भी सतत कामादि विकार, बुद्धि में सूक्ष्मता, स्मृति-विस्मृति आदि विकारों का अनुभव होता है। उन सब को अनुभव करनेवाला जो अहंकार है- वह अहंकार भी अन्तःकरण के आने पर, जाग्रत अवस्था में आने पर सिर उठाता है। अर्थात् जाग्रत अवस्था में इस अहंवृत्ति का भान होता है। सुषुप्ति अवस्था में अहंकार की वृत्ति भी नहीं रहती है, उसका हमें किसी प्रकार का भान नहीं है। एवं यह कभी भाव और कभी अभाव को प्राप्त होता है।

इस प्रकार यह सब विकारों से युक्त हमारी यह शरीरत्रय अथवा पंचकोशात्मक उपाधि है।

इसका अभिप्राय यह हुआ कि यह काल आदि से संकुचित होने से सत्य नहीं है, वह दृश्य रूपा होने से उसमें जड़त्व है। स्वतः प्रकाशित नहीं है। अतः स्वाभाविक प्रश्न होता है कि इन सब विकारों को कौन प्रकाशित करता है?

प्रोज्झिताशेष षड्भावविकारः – अर्थात् उसको जाननेवाले हम इन सब षड्विकार आदि से मुक्त है। हम अविकारी, साक्षी–दृष्टा रहकर इन सब विकारों को जानते है, उसे प्रकाशित करते है। यदि हम में भी परिवर्तन होता तो इन विकारों को कौन प्रकाशित करता? हम एक लाईटहाउस की तरह सब विकारों के मध्य में अविकारी रूप से स्थित है। वस्तुतः हम जो है, उसका न जन्म होता है, न मृत्यु।

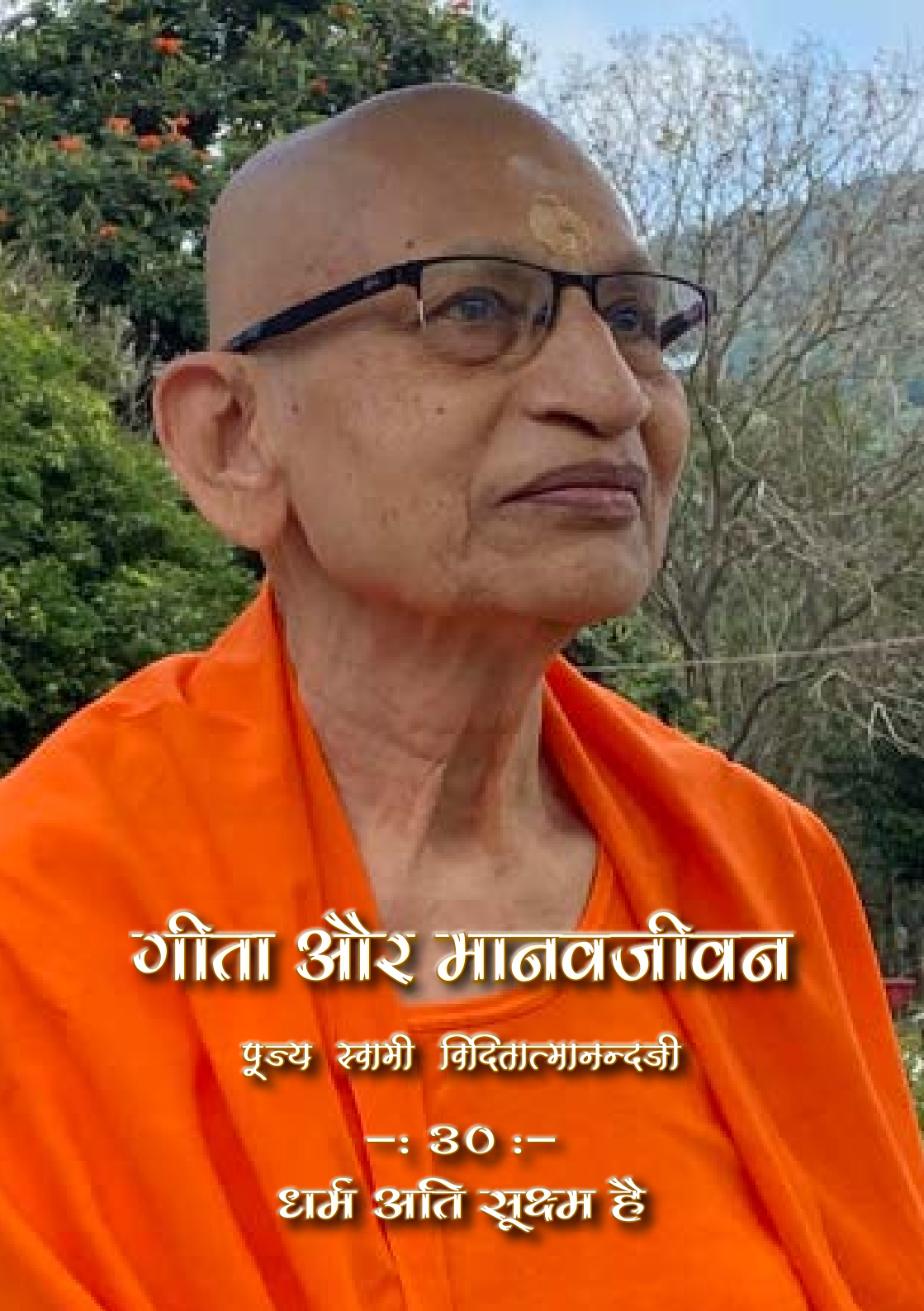

गीता और मानवजीवन

पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी

–: ३० :–

धर्म अति सूक्ष्म है

गीता और मानवजीवन

धर्म अति सूक्ष्म है। वह बहुत ही विचार और समझ की अपेक्षा रखता है। धर्म के तत्त्व का निर्णय करना सरल नहीं है। धर्म सामान्य विधान करे कि 'सत्य बोलना चाहिए' तो यह प्रश्न होता है कि अमुक परिस्थिति में सत्य बोलने से अन्य की हानि हो रही हो तब भी क्या सत्य को पकड़े रखना चाहिए? प्रश्न करनेवाला यदि दृष्टान्त देता है कि एक साधु जंगल में कुटिया में बैठा था और तब एक आदमी दोडता हुआ आया और कहने लगा कि, 'महाराज! हमें सुरक्षा प्रदान करें, एक आदमी मेरे पीछे पड़ा है, और यदि उसने मुझे पकड़ लिया तो वह मुझे मार डालेगा।' साधु ने कहा कि, 'जाओ! तुम उधर जाकर छिप जाओ।' दस मिनट के बाद एक दूसरा आदमी आया और पूछने लगा कि, 'महाराज! अभी इस

तरफ एक आदमी आया था, आपने उसे देखा है?' सत्यव्रतधारी वह साधु यदि यह कहे कि, ' हा! हमने देखा है, वो यहीं छिपा हुआ है' तो आप तुरन्त ही कहेंगे कि, 'स्वामीजी! ऐसा सत्य बोलना चाहिए? इसको सत्य कहा जाएगा?'

किस परिस्थिति में किसको सत्य कहना चाहिए यह भी विचार की अपेक्षा रखता है। सामन्यतः सत्य बोलना यह उचित है। किन्तु कई बार ऐसी विषम परिस्थिति होती है कि जहां निर्णय करना अत्यन्त कठिन और महत्वपूर्ण होता है।

इस प्रकार धर्म देश, काल और परिस्थिति के अनुरूप अर्थघटन की अपेक्षा रखता है और इसके अनुरूप उसका पालन करना होता है। अन्यथा श्री रामचन्द्रजी जैसे सत्यनिष्ठ और वीर पुरुष वाली के पीछे से तीर चलाते? अभी भी लोगों को यह बात हजम नहीं होती है कि श्री रामचन्द्रजी ने ऐसा क्यों किया? क्यों उन्होंने अपनी पत्नी का त्याग किया? यह प्रश्न अपने मन में उठता है, वैसे उनके मन में भी उठा ही होगा न? किन्तु वाली को वरदान था कि उनके सामने से कोई उसका सामना करता है तो सामना करनेवाले का आधा बल वाली को मिल जाएगा। इसलिए पहली

दृष्टि में तो यह अधर्म प्रतीत होने पर भी उसका आश्रय लेना पड़ता है। जिससे व्यापक जनहित होता हो, ऐसा प्रत्यक्ष अधर्म का भी आचरण करना पड़ सकता है, और तब वह धर्म बन जाता है। सत्य का भी प्रयोजन क्या है? सब का हित होना। महाभारत में भी युधिष्ठिर की 'नरो वा कुंजरो वा' वाली घटना आती है। द्रोणाचार्यजी ने युधिष्ठिर से पूछा कि मेरा पुत्र अश्वत्थामा मारा गया, यह सत्य है ? युधिष्ठिर सत्य के पक्षधर थे। जीवन में कभी असत्य नहीं बोले थे। इसलिए उनके मन में संघर्ष था। तब भगवान ने उनको कहा कि, 'तुम बोलो कि मानव अश्वत्थामा मारा गया। किन्तु युधिष्ठिर ऐसा करने को तैयार नहीं थे। भगवान ने कहा कि तुमको बोलना ही पडेगा, अन्यथा द्रोणाचार्य जिस तरीके से युद्ध कर रहे है, इसे देखते हुए तो समग्र पाण्डव सेना का विनाश हो जाएगा और अधर्म की विजय होगी। धर्म की रक्षा करने के लिए परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए झूठ बोलना भी धर्म ही है।'

इसका उल्लेख करने का प्रयोजन यह है कि हम किसी विषय में दुराग्रही न बन जाएं। कई मनुष्य 'धर्म-धर्म' करते हुए उसका पालन करने में दुराग्रही हो जाते है। वे लोग कई बार व्यावहारिक नहीं रहते। सूक्ष्मता से विचार किए बगैर, मात्र किसी आग्रह

को पकड़ के स्वयं को तथा अन्य को नुकसान पहुंचाते है।

वाहन बांई ओर चलाना यह नियम है, इसलिए ऐसा करना एक नागरिक का धर्म बन जाता है। जब कि दाहिनी और वाहन चलाना अधर्म है। किन्तु हम बांई ओर वाहन चला रहे है, और अचानक कोई व्यक्ति सामने आकर खड़ा हो जाए तो उसको बचाने के लिए दाहिनी और वाहन चला लें तो वह धर्म कहा जाएगा। नियम के पीछे सुरक्षा होना प्रयोजन है। नियम या धर्म के पालन के कारण सुरक्षा का बलिदान देना पड़े तो वह धर्म के श्रेणी में नहीं आता है।

एवं धर्म की सूक्ष्मता, उसके पीछे के दृष्टिबिन्दु को समझना आवश्यक है।

जीवनमुक्त

– ६४ –

बदरीनाथ

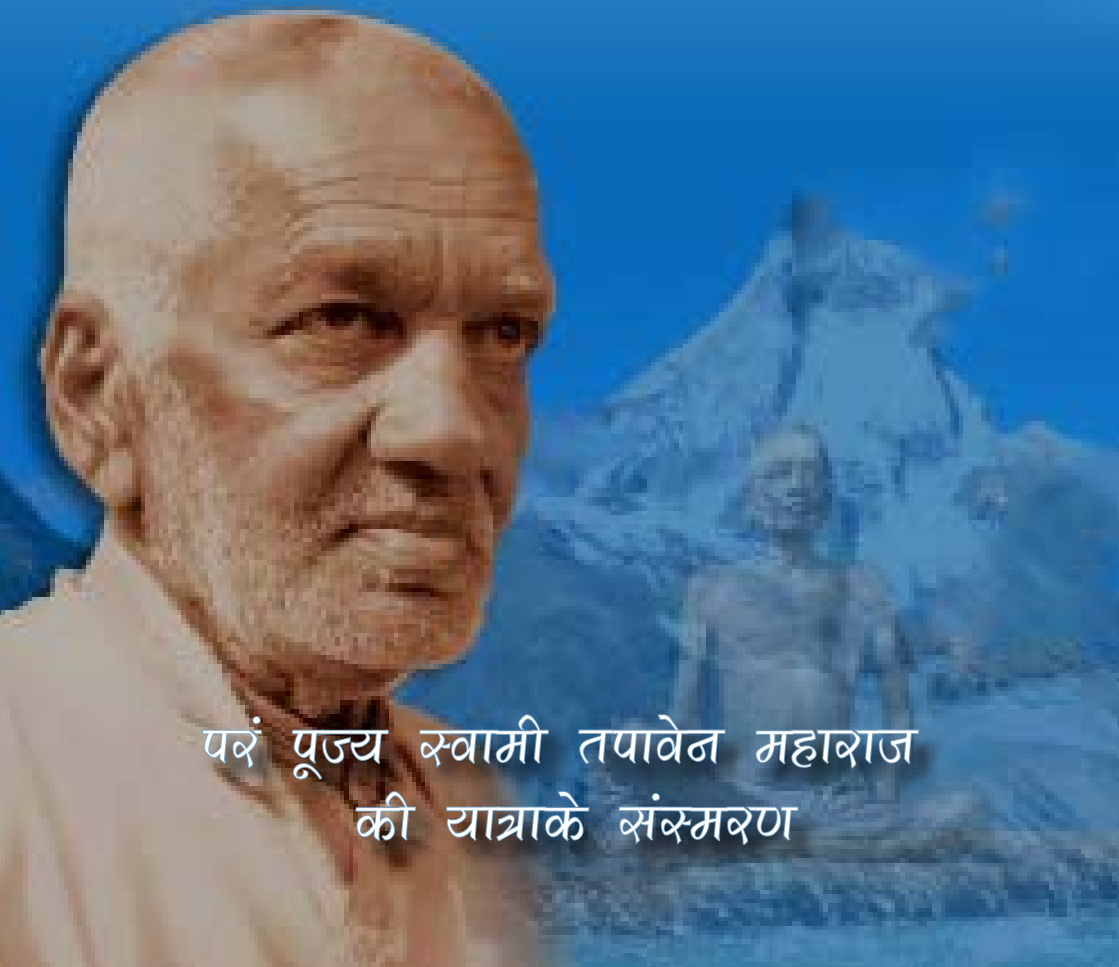

परं पूज्य स्वामी तपावेन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त

जो लोग यह मानते हैं कि कीर्तिकामना सामाजिक –अभिमान, देश–अभिमान अथवा धर्म–अभिमान के समान एक शुद्ध भावना है, वस्तुतः वे मानव प्रकृति से अनभिज्ञ है। जो व्यक्ति देशीय या धार्मिक कार्य में इसलिए संलग्न रहते हैं कि उनकी प्रतिष्ठा बढ़े, वे सच्चे देशाभिमानी या धर्माभिमानी नहीं हो सकते। यद्यपि ऐसे लोग देश तथा धर्म की उन्नति को अपने प्रयत्न का फल समझते है, तथापि ये लोग आन्तरिक रूप से अपनी उन्नति को ही लक्ष्य में रखकर ऐसे काम करते है। परंतु परमात्मा सभी अंतःकरणों का साक्षी है। वही यह निश्चित रूप से जानता हैं कि कौन मनुष्य कामनापूर्वक काम कर रहा है और कौन निष्काम भाव से! इस विषय में मनुष्यों का ज्ञान अनिश्चित है। कामना अंतःकरण का धर्म है। यही कारण है कि वह अति

सूक्ष्म तथा इन्द्रियों के लिए अगोचर है। ऐसे अप्रत्यक्ष इच्छा आदि धर्मो का निर्णय कुछ बाह्य लक्षणों को चिन्ह बनाकर अनुमान के द्वारा किया तो जाता है, किन्तु फिर भी यह नियम नहीं हो सकता कि वह निर्णय सदा निर्दोष ही होगा, वह प्रायः भ्रान्त ही होता है। आइए, अब पुनः वैराग्य की ओर आएं।

किन्तु जो वैराग्य, तत्वज्ञानजन्य नही होता, लौकिक कारणों से उत्पन्न होता है, वह सुस्थिर, सुदृढ़ या सफल नही हो सकता। युधिष्ठर का वैराग्य विचारजन्य था। बंधुओं की मृत्यु के कारण, तथा उस मृत्यु के लिए स्वयं हेतु बन जाने के कारण, धर्ममूर्ति युधिष्ठिर का मन विचारोन्मुख बन गया। राज्य, धन, पिता, पुत्र आदि सांसारिक विषयों की असारता, ऐसे असार विषयों के निमित्त सामान्य लोगों द्वारा किये जाने वाले कठोर कर्म तथा इनसे भोगे जानेवाले ऐहिक एवं पारलौकिक दुःख आदि सब के बारे में युधिष्ठिर ने गहन विचार किया। परिणामतः राज्य, धन और तज्जन्य सुखों से उनका मन विमुख हो गया। राज-आडंबरों में भी उन्हें बडी जुगुप्सा घृणा हुई।

उनकी बुद्धि सच्चे वैराग्य पद पर पहुंच गयी। उन्होंने सर्वस्व त्याग कर संन्यास स्वीकार करके वनान्तर में जाकर एकासन पर बैठ़कर अपने शरीर को शोषण के द्वारा नष्ट करने का मन ही मन निश्चय कर लिया। उन्होंने भीम आदि भाईयों, श्रीकृष्ण प्रभृति सखाओं और व्यास प्रभृति गुरुजनों से भरे राजदरबार में अपने निर्णय की उद्घोषणा कर दी। जब भीमसेन आदि भाईयों ने उनकी संन्यासेच्छा पर इस प्रकार आक्षेप किया कि–

यदि संन्यासतः सिद्धिं राजा कश्चिदवाप्नुयात्।
पर्वताश्च द्रुमाश्चैव क्षिप्रं सिद्धिं भवाप्नुयुः।।

'यदि केवल संन्यास लेने से कोई राजा सिद्धि प्राप्त कर सकता है तो बिना किसी कामना या व्यापार के पर्वत तथा वृक्ष कभी के सिद्धि पा सकते थे', तो श्रुतियुक्तियों के प्रमाण देकर युधिष्ठिर ने उनका खंडन किया। किन्तु फिर भी वे श्रीकृष्ण और श्री वेदव्यास के प्रेममय उपदेशों को अस्वीकार नहीं कर सके। इसलिए उन्होंने उस समय संन्यास स्थगित किया, और प्रज्वलित वैराग्यवह्नि को किसी प्रकार की क्षति पहुंचाये बिना वे राजकार्यों को संभालते रहे।

इस प्रकार कुछ दिन बीत गये। तब उन्होंने सुना कि किन्ही आन्तरिक कारणों से यदुकुल का नाश हो गया है तथा श्रीकृष्ण परलोक सिधार गये है। अब उनका वैराग्य जो पहले से ही प्रज्वलित था पहले की अपेक्षा अधिक धधक उठा। कालरूपी काल

सर्प से ग्रसित इस संसार की अस्थिरता तथा असारता के बारे में वे अत्यन्त विचारमग्न हो गयें। उन्होंने मन ही मन निश्चय कर लिया कि वह महाप्रस्थान के द्वारा लौकिक व्यापारों को समाप्त करेंगें। भाइयों तथा द्रौपदी ने भी उनका अनुगमन किया। हिमालय के हृदय देश से वे उत्तर की ओर चले गयें। नर नारायणों के तपःस्थान बदरिकाश्रम को पार कर उन्होंने उपर की ओर प्रयाण किया।

'लीजिए, द्रौपदी जमीन पर गिर पडी' – भीम का यह वचन सुनकर युधिष्ठिर ने पीछे की ओर देखे बिना और गति को रोके बिना केवल इतना ही कहा– 'अर्जुन में उसका पक्षपात ही इसका हेतु है' और वह आगे बढते गये। इसके बाद भीम ने जल्दी ही सहदेव के पतन का समाचार सुनाया। युधिष्ठिर ये उत्तर देते हुए कि 'अपने समान और किसी को बुद्धिमान् न समझने का अभिमान ही उसके पतन का कारण है', निश्चित रूप से वे चलते चले गये। इस प्रकार क्रमशः सभी भाइयों के गिर जानेपर युधिष्ठिर असहाय एवं एकाकी होकर इन्हीं हिमावृत, महाविकट, अति कठिन हिमाद्रि श्रृंगो पर जहां केवल मनुष्य ही नहीं अपितु प्राणिमात्र की यात्रा निरुद्ध है, बिना पीछे की ओर देखे आगे ही आगे प्रयाण करते रहे।

देखिएं, धर्मात्मज की वैराग्य संपत्ति! युधिष्ठिर के धैर्य तथा वीरव्रत की उपमा के योग्य और कोई धैर्यवान् एवं वीरव्रती व्यक्ति न तो पौराणिक चरित्रों में और न ही आधुनिक चरित्रों में मिल सकेगा। पुण्यात्मा युधिष्ठिर, अपने अन्तिम काल में जिस मार्ग पर इतने वैराग्यभाव तथा इतने धैर्य के साथ आगे बढते चले गये, आओ, उसी पुराण प्रसिद्ध महाप्रस्थान मार्ग का हम भी अनुगमन करे।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)

श्री कैकेयी चरित्र

– 02 –

प्रनवउं परिजन सहित विदेहू।
जाहि राम पद गूढ सनेहू।।

श्री कैकेयी चरित्र

युद्ध-क्षेत्र में किसी अवसर विशेष पर कैकेयी ने जिस शौर्य और धैर्य का प्रदर्शन किया, उससे प्रसन्न होकर राजा ने उन्हें दो वरदान मांगने का अवसर दिया। उस समय केवल महारानी ने मुस्कुराकर इसे थाती के रूप में स्वीकार कर लिया। समग्र अधिकरों के बीच वे स्वयं को निष्काम समझने की भूल कर बैठी थीं। वस्तुतः कैकेयी के चरित्र में जो औदार्य प्रदर्शित होता है, उसके पीछे युद्ध समर्पण की प्रेरणा न थी। एकछत्र अधिकार के गौरव ने ही उन्हें उदार बना दिया। इतना सब होते हुए भी महारानी कैकेयी सूर्यवंश को उत्तराधिकारी नहीं दे पाई यह उनके जीवन की प्रथम पराजय थी। इससे उनमें सहिष्णुता के भाव की अभिवृद्धि हुई। यही एक ऐसा स्थल था जहां वे स्वयं को अन्य रानियों की तुलना में विशिष्ट रूप में नहीं देख सकती थीं।

श्री कैकेयी चरित्र

महाराज श्री दशरथ को पुत्रप्राप्ति के लिए गुरुदेव द्वारा यज्ञ करने का आदेश दिया गया। यज्ञ की समाप्ति पर जो चरु प्राप्त हुआ वह सभी रानियों में वितरित किया गया क्योंकि अग्निदेव का आदेश इसी प्रकार का था। चरु वितरण की प्रक्रिया का प्रभाव कौशल्या और कैकेयी के मन पर अलग-अलग पड़ा हो यही स्वाभाविक प्रतीत होता है। चरु का आधा भाग कौशल्याजी को दिया गया। अवशिष्ट भाग को यदि कैकेयी और सुमित्रा में वितरित कर दिया जाता तो यह वितरण की सब से सरल प्रक्रिया होती। किन्तु इस प्रक्रिया को जिस रूप में पूरा किया गया उससे महारानी कैकेयी के अहं को संतुष्टि प्राप्त हुई होगी, क्योंकि अवशिष्ट भाग में से आधा अकेले उन्हें ही प्राप्त हुआ और बचे हुए चरु के दो भाग बनाकर उसे कौशल्या और कैकेयी के हाथ में देकर उनसे अनुरोध किया गया कि वे अपने हाथों से इसे महारानी सुमित्रा को प्रदान करें। यदि उस समय तीनों रानियों की मनःस्थिति की समीक्षा करें तो चरित्र के अनुरूप उनमें भिन्नता की प्रतीति होगी। सुमित्रा अम्बा में कृतज्ञता की भावना का उदय हुआ और वे सोचने लगीं कि दोनों महारानियां कितनी उदार हैं जो अपने लिए स्वयं एक पुत्र की आकांक्षा करती हुई मुझे दो पुत्रों का

आशीर्वाद प्रदान करती हैं। महारानी कौशल्या को लगा इसमें उदारता का प्रश्न ही कहां है? जो कुछ भी प्राप्त हुआ था उसे देकर यदि मैं स्वयं को दाता मान बैठूं तो इससे बढ़कर धृष्टता क्या होगी! किन्तु यदि महारानी कैकेयी को ऐसा प्रतीत हुआ हो कि वे उदार हृदया है और उनके द्वारा की जानेवाली वितरण प्रक्रिया में उन्हें निरन्तर गौरव की अनुभूति हुई हो तो उसमें कोई आश्चर्य न होगा। स्वयं में निरन्तर आत्मगौरव और श्रेष्ठता की अनुभूति कैकेयी के चरित्र का सर्वाधिक दुर्बल पक्ष था। प्रशंसा और स्तुति के प्रति उनका यह आकर्षण मानस के कई प्रसंगों में परिलक्षित होता है। प्रशंसा के पीछे निहित भावना को वे ग्रहण नहीं कर पाती हैं, इसलिए मन्थरा के द्वारा कथित स्तुतिपरक वाक्य उन्हें आकृष्ट कर लेते हैं।

कथा / प्रसंग

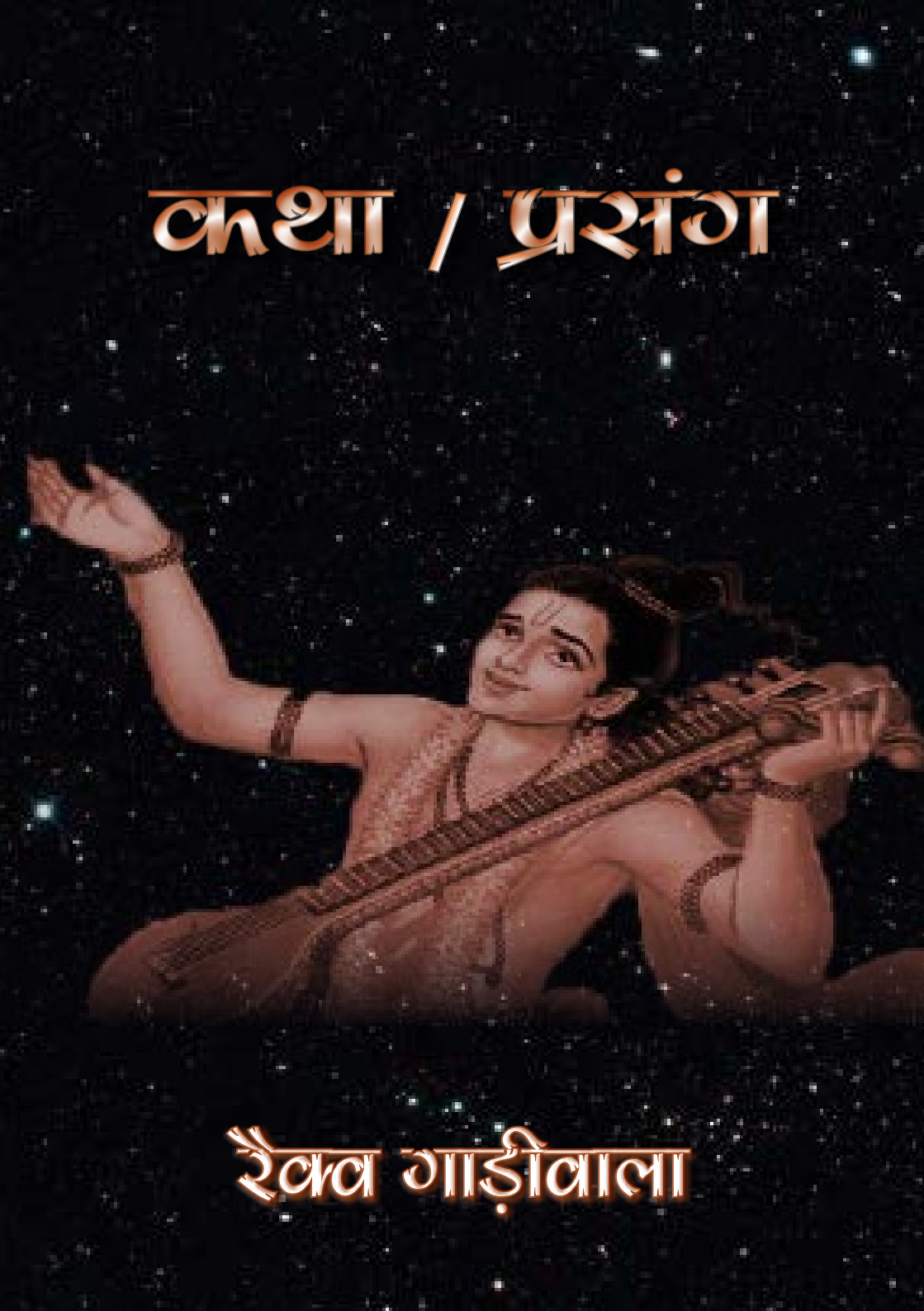

रैक्व गाड़ीवाला

रैक्व गाड़ीवाला

छान्दोग्य उपनिषद् में प्रसंग आता है कि प्रसिद्ध जानश्रुति नामक एक राजा था। वह बहुत श्रद्धा के साथ आदरपूर्वक योग्य पात्रों को बहुत दान, दक्षिणा आदि दिया करता था तथा सतत धर्मपरायण रहता था। वह चाहता था कि हर साधू-ब्राह्मण आदि की हम ही सेवा करें, अतः उन्होंने जहाँ-तहाँ सर्वत्र ऐसे अनेकों धर्मस्थान, अन्नक्षेत्र आदि खोल रखे थे।

राजा के अन्नदान से सन्तुष्ट हुए ऋषि और देवताओं ने राजा में ब्रह्मज्ञान की जिज्ञासा को जगाने के लिये हंसों का रूप धारण किया। वे रात को ऐसे समय उड़ते हुए महल की छत के उपर जा पहुँचे कि जिससे राजा को दिखाई दे सके। वहाँ पिछले हंस ने अगले हंस से कहा- 'भाई भल्लाश! इस जानश्रुति का तेज दिन के समान सब जगह फैल रहा है। इसका स्पर्श न कर लेना, अन्यथा यह प्रचण्ड तेज तुझे भस्म कर देगा। यह सुन कर अगले हंस ने कहा-

रैक्व गाड़ीवाला

'तुम बैलगाड़ी वाले रैक्व को नहीं जानते, यह तेज तो उसका है।' पीछले हंस ने कहा, 'वह गाड़ीवाला रैक्व कौन है और कैसा है?' वह बोला उस रैक्व की महिमा का बखान क्या किया जाय। जैसे जुआ खेलने वाला पासे से सब कुछ जीत लेता है। वैसे ही प्रजा जो कुछ भी शुभ कार्य करती है, वह सारे शुभ कर्म और उनका फल रैक्व को प्राप्त ही है। अर्थात् प्रजा की समस्त शुभ क्रियाओं का फल उसे मिलता है। वह रैक्व जिस जानने योग्य वस्तु को जानता है, उसे जो जान लेता है वह भी उन समस्त सुख को सहज ही प्राप्त कर लेता है।'

महल पर सोये हुए राजा जनश्रुति ने हंसों की बात सुनी और रातभर वह इन्हीं बातों का स्मरण करता हुआ जगता रहा। प्रातः उठ़ते ही उन्होंने अपने सिपाहियों से कहा कि तुम गाड़ीवाले रैक्व के पास जाकर उससे कहो कि मैं उनसे मिलना चाहता हूँ। राजा की आज्ञानुसार सिपाहियों ने बहुत से नगरों एवं गावों में खोज की। किन्तु उनका पता नहीं चला।

अन्ततः उन्होंने किसी एकान्त निर्जन प्रदेश में गाड़ी के नीचे बैठे हुए एक पुरुष को देखा और उससे पूछने पर पता चला कि गाड़ीवाला रैक्व वह ही है। सिपाहियों ने राजा को खबर दी और राजा छः सौ गायें, कुछ सोने के आभूषण और खच्चरियों से जोता हुआ रथ लेकर रैक्व के पास गया और हाथ जोड़कर

रैक्व गाड़ीवाला

रैक्व से बोला, 'भगवन्! यह गायें, स्वर्ण, रथ आदि आप स्वीकार कीजिएं और जिस तत्त्व को आप जानते हैं उसका मुझ को उपदेश दीजिए।' राजा की बात सुनकर रैक्व ने कहा, 'अरे शूद्र ! यह सब तू अपने ही पास रख। मुनि के शूद्र कहने पर राजा सोचने लगा कि शायद इतना थोड़ा धन लेकर उसके पास गया था इसलिए शूद्र कहा होगा। यह सोचकर बहुत सारा धन लेकर तथा अपनी पुत्री को लेकर पुनः उसके पास पहुंचा, और बोला कि, 'हे मुनि! यह सब मैं आपके लिये लाया हूँ, तथा मेरी पुत्री को भी आप अपनी धर्मपत्नी के रूप में स्वीकार कीजिये और आप जिस विशेष के बारे में जानते हैं उसके बारे में मुझे भी उपदेश कीजिए।'

राजा के वचन सुनकर तथा कन्या की करुणाभरी स्थिति देखकर रैक्व ने कहा, 'हे शूद्र ! तू फिर यही सब चीजें मेरे लिये लाया है। क्या इनसे ब्रह्मज्ञान खरीदा जा सकता है? तू शूद्र इसलिये नहीं है कि मुझे कम दान दे रहा है ! किन्तु इसलिये है कि तू इस दिव्यज्ञान का मूल्य इन तुच्छ चीजों के बराबर समझता है।' राजा चुप होकर बैठ गया। रैक्व की जगत के प्रति तुच्छता की तथा अपने अन्दर पूर्णता की दृष्टि देखकर वह अपने सत्कर्मों के पुण्य को भी तुच्छ समझने लगा। उसे अपने सत्कर्मों के कर्तृत्व के अभिमान से रहित और अज्ञान की विनम्रता से युक्त हुआ देखा तब रैक्व ने उसे ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Poojya Swamini Amitananda

Subject: Tattva-Bodha

Poojya Swamini Samatananda

Subject: Gita Chapter-7

आश्रम / मिशन समाचार

Online Ekadashi Podcast

Poojya Swamini Poornanandaji

आश्रम / मिशन समाचार

Nitya Shringar of Shivji

आश्रम / मिशन समाचार

Shiva Abhishek by Siddharth Arora

आश्रम / मिशन समाचार

Om Sri Gurubhyo Namah

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Ashok bhai Pandya visits Ashram

आश्रम / मिशन समाचार

श्रीमद् भगवद् गीता

(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 7.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

आश्रम / मिशन समाचार

ओनलाईन सत्संग

प्रति शनिवार, सायं 4 बजे से

on Google Meet

आदि शंकराचार्य विरचित तत्त्वबोध

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी

ओनलाईन सत्संग

प्रति रविवार, सायं 4 बजे से

on Google Meet

श्लोकपाठ / ध्यान / सत्संग

पूज्य स्वामिनी समतानन्दजी

एकादशी सत्संग

प्रति एकादशी को

on YouTube Channel

पूज्य स्वामिनी पूर्णानन्दजी द्वारा

INTERNET NEWS

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

Video Pravachans on Internet Archive Channel

(☝ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS

SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA

SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING

MORAL STORIES ETC

Audio Pravachans (☛ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS/

SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA

SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Sandesh ~Oct '25

Vedanta Piyush ~ Sep '25

Visit us online :
Vedanta Mission

Check out earlier issues of :
Vedanta Piyush

Join us on Facebook :
Vedanta & Dharma Shastra Group

Subscribe to our WhatsApp Channel
Vedanta Ashram Channel

Published by:
Vedanta Ashram, Indore